ISSN 2455-5169

परिवर्तन : साहित्य, संस्कृति एवं सिनेमा की वैचारिकी

किन्नरों का जीवन-संघर्ष- 'जिंदगी 50-50'

ग्रीष्मा एलिज़बेथ के. ए

शोध छात्रा, हिंदी विभाग
कोच्चिन विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय
कोच्ची-6820 22
greeshma.elezebathka@gmail.com

अन्य देशों की तुलना में भारत की सामाजिक व्यवस्था कुछ विषमता मूलक ढांचे की है। इस समाज में कुछ ऐसे अलिखित नियम भी है जिनके पालन किए बिना जीना लगभग असंभव है। हमारे समाज में केवल दो ही लिंग को स्वीकृति मिली है – स्त्री और पुरुष। लेकिन इन दोनों के अलावा एक अन्य लिंग के भी लोग हैं जो न पूर्ण रूप से स्त्री हैं, न पुरुष। ऐसे लोगों को हमारा समाज कई नामों से अभिहित करता है। उनमें एक नाम किन्नर है जिसे अंग्रेज़ी में थर्ड जेंडर कहा जाता है। किन्नरों को सामाजिक तौर पर उपेक्षित ही कर दिया जाता है। हमारे समाज का यह लैंगिक विभाजन ही इनकी कठिनाईयों का प्रमुख कारण है। लोंगमान शब्दकोश में किन्नरों को इस प्रकार परिभाषित किया गया है – *"A general word for people who feel that they belong to the other sex and not the sex / They were born with and who express this in their behaviour."*[1] अपने आपको सभ्य माननेवाले आधुनिक समाज ने सदैव ही इनको 'नपुंसक' कह कर मुख्य धारा के समाज से अलग रखने का प्रयास किया है। किन्नरों को और उनके अस्तित्व को परमोन्नत न्यायालय द्वारा स्वीकृति मिली है, फिर भी समाज इनको अपनाने से इनकार करता है। पहले के ही समान आज भी यह किन्नर वर्ग समाज से तिरस्कृत है। उनका अपना कोई परिवार नहीं है, न कोई रोज़गार की व्यवस्था है। समाज ने इनको कई मानवाधिकारों से वंचित कर रखा है, जिसके कारण मनुष्य के रूप में जन्म लेने के बावजूद भी ये लोग बदतर ज़िंदगी जीने के लिए विवश हैं। जहाँ हम जैसे लोग बहुत आराम से दिन काटते हैं, वहाँ इन किन्नरों को रोज़ किसी न किसी समस्या का सामना करना ही पड़ता है।

वर्तमान समय में थर्ड जेंडरों पर ढेर सारे उपन्यासों एवं कहानियों का सृजन हुआ है, किन्तु जितनी भी रचनाओं का सृजन हुआ है, वे सब इनके जीवन की छोटी - सी झलकियाँ मात्र हैं क्योंकि समाज की तरह साहित्य में भी किन्नर उपेक्षित ही रहे हैं। किन्नरों पर आधारित जितनी भी रचनाएँ रची गयी हैं, वे सब ट्रान्सजेंडरों के जीवन की झलकियाँ होने के बावजूद, उनकी त्रासदी को व्यक्त करने के

लिए समर्थ हैं। लेकिन भगवंत अनमोल द्वारा रचित 'ज़िंदगी 50-50' एक प्रमुख उपन्यास है जिसमें ट्रान्सजेंडरों के जीवन संघर्ष को बेबाकी के साथ प्रस्तुत किया गया है।

इस उपन्यास के प्रमुख पात्र हैं – अनमोल और उसका छोटा भाई हर्षा। हर्षा एक किन्नर बच्चा है। एक किन्नर बनकर पैदा होने के कारण हर्षा सदैव ही अपने परिवार और माँ – बाप के प्यार से वंचित ही रहा है। जब से हर्षा का जन्म हुआ है तब से उनके बाबूजी को बहुत शर्म महसूस होती थी। उनको लगता है उन्होंने एक किन्नर बच्चे को जन्म दिया है, जो शर्म-हया की बात है। वे हर्षा को समाज की नजरों से चोरी छुपे पालने लगे। उनके लिए केवल एक ही बेटा था - अनमोल। जब घर में कोई रिश्तेदार आते थे तो बाबूजी अनमोल का गुणगान गाते ही रहते थे, और जब वे लोग हर्षा के बारे में पूछेंगे तो उनका चेहरा शर्म से झुक जाता था। स्कूल में हर्षा का कोई दोस्त नहीं था, उसके साथ खेलने के लिए केवल अनमोल ही जाता था। उनके गाँव के पास ही एक किन्नर बस्ती थी वहाँ की गुरु कस्तूरी जब हर्षा को अपने साथ ले जाने की अनुमती लेने बाबूजी के पास आयी, तब उन्होंने गालियाँ सुना कर उसको भगा दिया। कस्तूरी किसी भी कीमत पर हर्षा को अपने साथ ले जाना चाहती थी। एक दिन तंग आकर कस्तूरी बाबूजी से इस प्रकार कहती है - "एक हिजड़े का बाप है तू, हिजड़े का, और इतना आसान न है समाज में एक हिजड़े का बाप बनकर जीना। सुई की नोक पे रहना होत है। इसकी चुभन से तोरा पैर ही नहीं तोरा शरीर ही नहीं तोरी आत्मा तक भी तड़पेगी... यह समाज तुझे जीने न देगा। या तू खुद मर जाएगा या फिर तंग आकर खुद चलते हुए उस बच्चे को हमार यहाँ देने आएगा।"[2]

बाबूजी के मन में हर्षा के लिए प्यार था और प्यार से ज्यादा नाराज़गी कि वह किन्नर बनकर पैदा क्यों हुआ? हर्षा को अपने दिल की बात बताने के लिए उसके स्कूल एवं परिवार में कोई नहीं था। इसलिए वह अपने दिल की बात एक डायरी में लिखता था जिसके पहले पन्ने पर गुलाबी रंग के सुंदर अक्षरों में लिखा हुआ था -"मैं जो दिखता हूँ वह हूँ नहीं और जो हूँ वह दिखता नहीं।" दरअसल इन शब्दों में उसके और उसके जैसे पैदा हुए हज़ारों किन्नरों के जीवन की तमाम विडंबनाएँ शामिल हैं। आदमी के शरीर में एक औरत था वह, पर वह समाज में अपनी इच्छा से जी नहीं सकता था। हर किन्नरों की यही समस्या है की उसको मुख्य धारा समाज में एक आम ज़िंदगी जीना संभव नहीं है। एक दिन जब हर्षा स्कूल से वापस आ रह था था, तब एक ज़ालिम ने उसका बलात्कार किया। हर्षा ने हर मुमकिन कोशिश की भागने के लिए, उससे बचने के लिए, पर वह नाकामयाब हुआ और जब बाबूजी को इस बात का पता चला तो उन्होंने गुस्से में आकर हर्षा को बहुत पीटा। हर्षा के साथ ऐसा जो कुछ भी होता है, तो उसके लिए उसे ही जिम्मेदार ठहराया जाता था। वह खुद से इस प्रकार सवाल पूछता रहता है –"इतने वर्षों में मैं

यह समझ गयी थी कि यह समाज मुझे प्यार तो छोड़ो मुझे समझने की भी कोशिश नहीं करता। आखिर मेरी गलती क्या है? मेरा एक अंग अविकसित है। बस इतनी-सी, शायद इस तथाकथित समाज में सारा फसाद सिर्फ इसी अंग को लेकर होता है... हर वक्त मुझे यह एहसास दिलाया जाता है कि मैं हर किसी से अलग हूँ। रही-सही कसर अगर बच जाती तो बाबूजी अपनी भड़ास निकाल कर पूरी कर लेते। जब मैं इतनी ही अलग हूँ तो इस सभ्य समाज ने मुझे जैसे अलग व्यक्ति को जन्म क्यों दिया ? आखिर इनकी ही तो गलती का परिणाम हूँ मैं। ये अपनी गलती मुझ पर क्यों थोपते हैं ?"[3] एक दिन बाबूजी ने खुद हर्षा को मारने की कोशिश भी की। ऐसे वह अपने ही परिवार से तंग आकर कस्तूरी के संग किन्नर बस्ती में रहने लगा, और वहाँ वह हर्षिता बना।

ऐसे कई साल गुजर गए अनमोल बड़ा इंजिनियर बना। हर्षीता मुंबई में किन्नरों के संग रहने लगी। अनमोल अपनी पत्नी आशिका और बेटा सूर्या के साथ खुश था। उनका बेटा सूर्या भी एक किन्नर था, पर आशिका और अनमोल ने उसको यह एहसास नहीं दिलाया कि वह एक किन्नर है। उसको सारी आज़ादी दे दी जिसकी वजह से वह बहुत होशियार बना अनमोल के पास सब कुछ था अच्छी नौकरी, गाड़ी, और अपार्टमेंट वहाँ दूसरी तरफ उसी शहर में हर्षीता अपनी रोजी - रोटी के लिए तालियाँ पीट कर बधाइयाँ देकर भीख माँगती रहती थी। एक दिन हर्षीता को पता चला कि उसके बाबूजी को अपनी खानदानी जमीन को बचाने के लिए 5 लाख की जरूरत है। अनमोल के पास पैसा था पर उसने पैसा नहीं दिया बल्कि उसने झूठ भी कहा। हर्षिता के पास पैसा नहीं था, फिर भी उसने पैसा जमा कर देने को ठान लिया। उसने न चाहते हुए भी वेश्यावृत्ति को अपनाया। बाबूजी को पैसे दे दिया, पर वह AIDS की बीमारी की शिकार हो गई। जब उसने बाबूजी को पैसे दे दिया तो उसको लगा कि उसके जीवन को मुक्ति मिल गयी और इसी खुशी में उसने खुदखुशी की, दूसरी तरफ सूर्या ने अपना एक प्राइवेट डिटेक्टिव कंपनी खोली और वह अपने काम से खुश भी था। वहाँ दूसरी तरफ हर्षिता ने अपनी जान दे दी और अंत में वह अपनी डायरी में अनमोल के लिए इस प्रकार एक चिट्ठी छोड़कर जाती है जिस में लिखा गया –"किन्नर होना इतना बड़ा अभिशाप क्यों है ? बस मेरा अधूरापन ही तो न कैसे-कैसे पल आए। इस शरीर ने सब भुगता, सब सहा। जिस शरीर का लोग मजाक उड़ाते थे उसे ही रात को अपने मन बहलाने का ज़रिया बना लेते हैं। अच्छा है इन लोगों से दूर अपना एक समुदाय है। मेरे शारीरिक अस्तित्व में दुहरापन है। लेकिन उस तथाकथित समाज के व्यक्तित्व के दुहरेपन पर मैं थूकती हूँ। बचपन में मेरे बाबूजी को ये लोग न सताते तो आज मैं भी पढ़ लिखकर कुछ बन जाती। खीसे निपोरकर सड़क पर भी माँगती नजर नहीं आती। उस पर एक के बाद एक इस शरीर पर हुए अत्याचार याद आता है तो खौफ से सिहर जाती

हूँ।"[4] हर्षा की यह कथन असल में ऐसे जीने वाले हज़ारों किन्नरों का दर्द है। अगर समाज इनको और इनके परिवार को तंग न करता तो ये लोग आज अपने परिवार के साथ होते, हमारी तरह पढ़ – लिख कर कुछ बन जाते, न कि सड़कों में भीख माँगते, और न ही अपने परिवार वालों के प्यार से वंचित होते। सूर्या अपने काम में कामयाब हुआ तो अनमोल को ऐसा महसूस हुआ कि ऊपर में हर्षीता सब कुछ देख रही है और वह खुशी से सूर्या और अनमोल को आशीर्वाद दे रही है।

असल में हर किन्नर की नियति कुछ इस प्रकार है कि जन्म से लेकर मौत तक प्यार की तलाश में वे भटकते रहते, अपने हर अरमान की कुर्बानी कर के अपनों की हर एक इच्छा पूरी करने के बाद भी इनको प्यार हासिल नहीं हो पाएगा। बचपन से लेकर मौत तक वे प्यार के भूखे रहते है, प्यार और अपनापन इनके लिए सिर्फ एक अधूरा सपना है, जो कभी पूरा नहीं हो सकता, अधूरी किस्मत, अधूरी देह, अधूरे सपने, अधूरा जीवन। इस अधुरेपन में ही इनका पूरा जीवन कट जाता है, वे अपने तन – मन की पीढ़ा और दर्द का इज़हार नहीं कर सकते। इनके साथ जो कुछ भी होता है, उसे चुप – चाप सहना पड़ता है और यही है इनकी नियति।

दरअसल यह उपन्यास दो पीढ़ियों की कहानी पेश करता है। हर्षिता के समय मैँ उसको अपनाने के लिए और उसको समझने के लिए कोई नहीं था, न ही उसका परिवार और न ही उसका समाज और इसकी वजह से उसको वेश्या बननी पड़ी। वहीं दूसरी तरफ सूर्या को समझने के लिए उसके माँ - बाप और उसके परिवार वाले उसके साथ थे जिसकी वजह से वह कामयाब हुआ। असल मैँ यह उपन्यास पूरे समाज के लिए एक संदेश भी देता है कि किन्नर हम से थोड़े अलग हैं, वे भी हमारे जैसे मनुष्य हैं। पर इसका तात्पर्य यह नहीं है कि समाज इनकी जिंदगी से इनकी खुशियाँ छीन ले। चित्रा मुद्गल के 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपरा', महेद्र भीष्म की 'किन्नर कथा', और पारु मदन नाईक का 'मैं क्यू नहीं' जैसे उपन्यास भी समाज को यही संदेश देते हैं। सारांश केवल इतना है कि हर किसी को अपनी मर्ज़ी के अनुसार जीने का हक है वह चाहे स्त्री हो या पुरुष हो अथवा किन्नर। वहाँ लिंग, धर्म, रंग का कोई स्थान नहीं है ।

संदर्भ :

1. Longman Dictionary ,Pearson Education Limited , P। 1877
2. भगवंत अनमोल – ज़िंदगी 50 -50 – पृ। – 35
3. वही - 162
4. वही - 207